वंचित वर्गों की शिक्षा—दशा एवं दिशा

आर0 जे0 सिंह*

राखी खरवन्दा**

निधि गुलाटी***

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के भाग—4 (शीर्षकः 'समानता के लिए शिक्षा') के अन्तर्गत कहा गया है: 'नई नीति विषमताओं को दूर करने पर विशेष बल देगी और अब तक वंचित रहे लोगों की विशेष आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए शिक्षा के समान अवसर मुहय्या कराएगी।'

इस सम्बन्ध में शिक्षा नीति में जिन वर्गों या समूहों का उल्लेख किया गया है, उनमें महिलाओं की समानता हेतु शिक्षा, अनुसूचित जातियों की शिक्षा, अनुसूचित जनजातियों की शिक्षा, शिक्षा की दृष्टि से पिछड़े हुए दूसरे वर्ग और क्षेत्र (जिनमें विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों, पहाड़ी और रेगिस्तानी जिलों, दुर्गम और दूरस्थ क्षेत्रों तथा टापुओं का उल्लेख किया गया है), अल्पसंख्यकों, विकलांगों और प्रौढ़ों की शिक्षा को शामिल किया गया है और इनमें से प्रत्येक वर्ग के लिए आवश्यकतानुसार अलग—अलग उपायों व युक्तियों का सहारा लेने की प्रतिबद्धता दर्शाई गई है। उदाहरण के लिए :

- महिलाओं के लिए नए मूल्यों की स्थापना हेतु शिक्षण संस्थाओं के सक्रिय सहयोग से पाठ्यक्रम तथा पठन—पाठन सामग्री की पुनर्रचना करना, अध्यापकों व प्रशासकों को पुनः प्रशिक्षित करना, महिलाओं से सम्बन्धित अध्ययन को विभिन्न पाठ्यचर्याओं का अंग बनाना, शिक्षण—संस्थाओं को महिला—विकास के सक्रिय कार्यक्रम शुरू करने हेतु प्रेरित करना, विभिन्न स्तरों पर तकनीकी और व्यावसायिक शिक्षा में महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करना, आदि।

- अनुसूचित जातियों की शिक्षा के लिए निर्धन परिवारों को इस प्रकार का प्रोत्साहन देना कि वे अपने बच्चों को 14 वर्ष की उम्र तक नियमित रूप से स्कूल भेज सकें, सफाई व चर्मशोधन जैसे कार्यों में लगे परिवारों के बच्चों के लिए मैट्रिक पूर्व छात्रवृत्ति योजना पहली कक्षा से शुरू करना, अनुसूचित जाति के शिक्षकों की नियुक्ति पर विशेष ध्यान देना, जिला केन्द्रों पर इन जातियों के छात्रों हेतु छात्रावास की सुविधाएं उपलब्ध कराना, आदि।

---

* आचार्य एवं पूर्व कुलपति, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी एवं पूर्व प्रतिकुलपति तथा शिक्षा संकायाध्यक्ष, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ।

** चीफ एक्जीक्यूटिव डायरेक्टर, आर्यावर्त ग्रुप आफ एजूकेशनल इंस्टीट्यूट्स, लखनऊ।

*** वाइस प्रिंसिपल, आर्यावर्त इंस्टीट्यूट आफ हायर एजूकेशन, लखनऊ।

- अनुसूचित जनजातियों की शिक्षा हेतु आदिवासी इलाकों में प्राथमिक शालाएँ खोलने के काम को प्राथमिकता देना, पाठ्यक्रम निर्माण तथा शिक्षण सामग्री तैयार करने में शुरूआत में आदिवासी भाषाओं का प्रयोग करना और ऐसा प्रबंध करना कि आगे चलकर (कुछ वर्षों बाद) वे क्षेत्रीय भाषा के माध्यम से शिक्षा प्राप्त कर सकें, पढ़े–लिखे प्रतिभाशाली आदिवासी युवकों को प्रशिक्षण देकर अपने क्षेत्र में ही शिक्षक बनने को प्रोत्साहित करना, बड़ी तादात में आश्रमशालाएँ और आवासीय विद्यालय खोलना, उनके सामाजिक तथा मानसिक अवरोधों को दूर करने हेतु विशेष उपचारात्मक और अन्य कार्यक्रम चलाना, आदि।

- अल्पसंख्यकों के उन वर्गों हेतु जो तालीमी दौड़ में काफी पिछड़े और वंचित हैं, उनकी शिक्षा पर पूरा ध्यान देना, संविधान में उल्लिखित उन्हें अपनी भाषा और संस्कृति की हिफाजत करने तथा, अपनी शैक्षिक संस्थाएं कायम करने और चलाने के जो अधिकार दिए गये हैं उनको प्रोत्साहित करना, पाठ्य पुस्तकें तैयार करने व सभी स्कूली क्रिया–कलापों में वस्तुगतता (objectivity) सुनिश्चित करना, तथा "सामान्य केन्द्रिक शिक्षाक्रम" (The core curriculum) के अनुरूप राष्ट्रीय लक्ष्यों और आदर्शों के आधार पर बढ़ावा देने के सभी सम्भव प्रयास करना, आदि।

- विकलांगों के लिए शिक्षा के संदर्भ में कहा गया है कि विकलांगता यदि हाथ–पैर की या मामूली सी है तो ऐसे बच्चों की पढ़ाई आम बच्चों के साथ हो, गंभीर रूप से विकलांग बच्चों के लिए छात्रावास वाले खास स्कूलों की व्यवस्था होगी– (यथासम्भव जिला मुख्यालयों में), विकलांगों के लिए व्यावसायिक प्रशिक्षण की पर्याप्त व्यवस्था की जाएगी, शिक्षकों– खासतौर से प्राथमिक कक्षाओं के शिक्षकों के प्रशिक्षण कार्यक्रमों को नया स्वरूप प्रदान कर उन्हें विकलांग बच्चों की कठिनाइयों को ठीक से समझने और उन्हें दूर करने हेतु सक्षम बनाया जायेगा; विकलांगों की शिक्षा हेतु स्वैच्छिक प्रयासों (Voluntary efforts) को हर सम्भव तरीकों से प्रोत्साहित किया जायेगा।

यह तो रहीं मूल शिक्षा नीति 1986 की प्रतिबद्धताएँ। आगे चलकर 5 वर्ष बाद, इनमें कुछ संशोधन हुए जिन्हें ''प्रोग्राम ऑफ ऐक्शन (P.O.A.) – 1992'' नामक दस्तावेज में दर्शाया गया है। इस क्रियान्वयन कार्यक्रम (POA-1992) में वंचित वर्गों की शिक्षा से सम्बन्धित प्रमुख बातें इस प्रकार कही गई हैं:

(1) समानता शिक्षा कार्यक्रम के तहत समग्र साक्षरता अभियान पर अधिक जोर दिया जायेगा।

(2) राष्ट्रीय साक्षरता मिशन (National Literacy Mission) को निर्धनता निवारण, पर्यावरण संरक्षण, लघु परिवार आदि के अतिरिक्त, नारी समानता को प्रोत्साहन और प्राथमिक शिक्षा के सार्वजनीकरण (Universalization) से जोड़ा जायेगा।

(3) भविष्य में शिक्षण हेतु नियुक्त होने वालों में 50% महिलाएँ होंगी।

(4) शालात्यागी बच्चों, स्कूल–रहित क्षेत्रों के बच्चों, दिवा–स्कूल जाने में असमर्थ कामकाजी बच्चों तथा लड़कियों हेतु अनौपचारिक शिक्षा के कार्यक्रमों को सुदृढ़ और विस्तृत किया जायेगा।

(5) 21वीं सदी में प्रवेश से पूर्व 14 वर्ष की आयु वाले सभी बच्चों को संतोषजनक गुणवत्ता वाली निःशुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा उपलब्ध कराने के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए एक राष्ट्रीय मिशन चलाया जाएगा।

(6) माध्यमिक स्तर पर अनुसूचित जाति व जनजाति के बच्चों के नामांकन, विशेषकर विज्ञान, वाणिज्य तथा व्यावसायिक धाराओं में जोर दिये जाने की बात कही गई।

(7) मुक्त अधिगम प्रणाली (Open Learning System) को सुदृढ़ किये जाने का भी उल्लेख किया गया।

(8) आठवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान तथा उसके बाद शिक्षा पर व्यय राष्ट्रीय आय के 6% से अधिक होना सुनिश्चित किया जाएगा आदि, आदि।

शिक्षा नीति–1986 तथा उसके क्रियान्वयन कार्यक्रम–1992 के उपर्युक्त आश्वासनों एवं वचनबद्धताओं के सापेक्ष, यदि हम वर्तमान स्थिति की समीक्षा करते हैं तो इस बात में जरा भी संदेह नहीं प्रतीत होता है कि विगत दो–ढाई दशकों में वंचित वर्गों को राष्ट्र की मुख्य शैक्षिक धारा में अन्य वर्गों के समकक्ष लाने की दिशा में काफी कुछ प्रयास हुआ है। इस सम्बन्ध में सर्वशिक्षा अभियान, प्राथमिक शिक्षा का सार्वजनीकरण, निरौपचारिक शिक्षा, मुक्त अधिगम प्रणाली, विभिन्न शैक्षिक स्तरों पर छात्रवृत्ति एवं अन्य सहायता योजनाएं, राष्ट्रीय साक्षरता मिशन, महिला सशक्तीकरण, समग्र साक्षरता अभियान, उच्च शिक्षा संस्थाओं में प्रवेश हेतु आरक्षण और फीस माफी की व्यवस्था आदि कार्यक्रमों का उल्लेख किया जा सकता है।

अगस्त, 2009 को भारतीय संसद द्वारा पारित निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा विधेयक–2008, जिसने 01 अप्रैल 2010 से कानून का रूप ले किया है, को अब न केवल जनसामान्य के हितों की रक्षा और मानवाधिकार के रूप में बल्कि वंचित वर्गों के हित में भी एक बड़ी पहल के रूप में देखा जा रहा है, जिसकी प्रतीक्षा दशकों से की जा रही थी। किन्तु जहाँ तक उपर्युक्त सरकारी प्रयासों की व्यावहारिक सफलता और जमीनी हकीकत की बात है, अनेक शैक्षिक प्रेक्षकों का मानना है कि मंजिल अभी काफी दूर है। मसलन, उनका कहना है कि शिक्षा में समानता का अर्थ है सभी वर्गों व समूहों के बच्चों को समान स्तर वाली गुणवत्तापरक शिक्षा प्रदान करना जबकि हमारे देश में सरकारी स्कूलों, राजकीय सहायता प्राप्त स्कूलों, विशेष दर्जा प्राप्त स्कूलों (जैसे– नवोदय आदि) और स्ववित्त पोषित प्राईवेट स्कूलों में शिक्षा की गुणवत्ता का स्तर समान नहीं है और न ही शिक्षा के अधिकार वाले उपर्युक्त विधेयक/कानून में समान स्तर की शिक्षा प्रदान करने की कहीं प्रतिबद्धता जताई गई है। वस्तुतः यह शैक्षिक अवसरों की समानता हेतु एक महत्वपूर्ण विचारणीय बिन्दु है, जिस पर ध्यान देने की आवश्यकता है।

दूसरे, यह मुद्दा भी उठाया जा रहा है कि शिक्षा के अधिकार को मूर्त रूप प्रदान करने

हेतु केन्द्र और राज्य सरकारों द्वारा व्यय किए जाने वाले धन के आवंटन का अनुपात व्यावहारिक नहीं है। ''पहले यह सोचा गया था कि 90 फीसदी खर्च केन्द्र सरकार वहन करेगी और बाकी दस फीसदी राज्य सरकारें। फिर यह अनुपात बदलकर 75 और 25 का कर दिया गया। अब इसे 65 और 35 के अनुपात में लागू करने का प्रस्ताव है। राज्य सरकारों के संसाधन पहले से ही काफी कम है। उनकी हमेशा से शिकायत रही है कि कम संसाधनों के बावजूद उन पर खर्च की बाध्यता थोप दी जाती है और इसकी भरपाई नहीं होती।'' फिर सभी राज्यों की आर्थिक स्थिति भी समान नहीं है। ऐसी स्थिति में विभिन्न वर्गों व समूहों के मध्य शैक्षिक समानता आये तो कैसे?

यहाँ पाठकों का ध्यान इस बात की ओर आकृष्ट करना भी आवश्यक प्रतीत होता है कि आज भी हमारे विद्यालयों में आवश्यक भौतिक सुविधाओं का पर्याप्त अभाव है। ''सिर्फ 37 फीसदी सरकारी स्कूल ही ऐसे हैं, जिनमें कामचलाऊ शौचालय हैं, उनमें भी 25 फीसदी में लड़कियों के लिए अलग शौचालय नहीं हैं, दो तिहाई स्कूलों में बिजली नहीं है, अध्यापकों का 12 फीसदी काम गैर–शैक्षणिक गतिविधियों में खर्च होता है क्योंकि स्कूलों में लिपिक वर्ग के कर्मचारी नही हैं। 47 फीसदी स्कूल ऐसे हैं जिनमें पर्याप्त कक्षाएँ नहीं हैं।'' और यदि हम देश के दूर–दराज इलाकों में शिक्षा के परिदृश्य और जमीनी हकीकत की बात करें तो वरिष्ठ पत्रकार इरा झा के इस प्रेक्षण को नकारा नहीं जा सकता कि ''उड़ीसा, छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, पश्चिम बंगाल, हिमांचल प्रदेश, जम्मू–कश्मीर और पूर्वोत्तर राज्यों के दूर–दराज और दुर्गम जंगलों और पहाड़ी इलाकों में पीने के पानी तक का पुख्ता इन्तजाम नहीं हैं। ऐसे हालात में बच्चों को स्कूल न भेजना अभिभावक का बहाना नहीं, मजबूरी है।''

इस संदर्भ में हम सुप्रीम कोर्ट के उस हालिया फैसले (दिनांक 12 अप्रैल 2012) पर भी एक संक्षिप्त दृष्टि डाल सकते हैं जिसमें कहा गया है कि प्राईवेट विद्यालयों को आर्थिक दृष्टि से कमजोर वर्गों के बच्चों के लिए 25 प्रतिशत सीटों को आरक्षित करना होगा। इसमें जरा भी संदेह नहीं कि यह एक अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रगतिशील निर्णय है। परन्तु इसके सफल क्रियान्वयन के सम्बन्ध में अनेक प्रकार की आशंकाएँ उठाई जा रही हैं। उदाहरण के लिए, जैसा कि राज्य सभा सदस्य और पूर्व सचिव एन0के0 सिंह कहते हैं, ''इसे लागू करने में समय लगेगा। सरकार इसके खर्च की जो भरपाई करेगी, वह काफी कम है, इसलिए स्कूल बाकी भार बाकी 75 फीसदी बच्चों के अभिभावकों पर डाल देंगे। जरूरी नहीं कि ये सारे अभिभावक समृद्ध तबके के ही हों। ऐसी क्रास सब्सिडी हमेशा ही कई मसले खड़े करती है।''

नोबेल पुरस्कार प्राप्त अर्थशास्त्री अमर्त्यसेन लिखते हैं कि ''मैंने भारत में प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में हो रहे प्रयासों के कई अध्ययनों को करीब से देख है। ..... हमने पाया कि गरीब से गरीब माता–पिता भी अपने बच्चों को प्राथमिक शिक्षा देने को लालायित थे, ताकि वे उनकी तरह एक निस्सहाय जिन्दगी की तरफ न बढ़ें।'' आगे वे कहते हैं कि ''अक्सर गरीब परिवारों की माली हालत अभिभावकों को अपने बच्चों को स्कूल भेजने से रोकती है। तब तो और, जब पढ़ाई के बदले कोई फीस देनी पड़े। .... मैं जानता हूँ कि बाजार व्यवस्था के कुछ पैरोकार चाहते हैं कि स्कूल फीस तय करने का अधिकार बाजार के हवाले कर देना चाहिए। लेकिन ऐसा नहीं किया जा सकता, बल्कि यह सभी बच्चों को बुनियादी शिक्षा देने के समाजिक दायित्व के विपरीत

होगा।

उपर्युक्त क्रम में यदि हम लोग वंचित और गैर–वंचित वर्गों के मध्य शैक्षिक–अंतरालों सम्बन्धी कुछ तथ्यों पर दृष्टि डालें, जो सरकारी सर्वेक्षणों और समितियों के निष्कर्षों पर आधारित है तो भी यही स्पष्ट होता है कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति–1986 लागू होने से अब तक तमाम प्रयासों के बावजूद अपेक्षित स्तर तक स्थिति में सुधार नहीं हो सका है। उदाहरण के लिए :

- सन् 2011 की जनगणना के अनुसार देश के कई राज्यों में महिला और पुरुष साक्षरता के मध्य अंतराल 16.5 प्रतिशत से 27.8 प्रतिशत तक पाया गया जिसमें उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखण्ड, उड़ीसा, छत्तीसगढ़, हरियाणा आदि शामिल हैं।
- भारतीय मुस्लिम अल्पसंख्यक वर्ग की सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक स्थिति का अध्ययन करने के लिए मार्च 2005 में प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने अवकाश प्राप्त जस्टिस राजेन्द्र सच्चर की अध्यक्षता में एक कमेटी बनाई जिसने नवम्बर 2006 में अपनी रिपोर्ट सौंपी। इस रिपोर्ट के कुछ प्रमुख शैक्षिक तथ्य इस प्रकार थेः–
  (1) अन्य धार्मिक समूहों की तुलना में प्राथमिक, मिडिल और हायर सकेण्डरी के स्तर पर मुस्लिम बच्चे बड़ी संख्या में पढ़ाई छोड़ देते हैं।
  (2) 17 साल से अधिक आयु वाले 17 फीसदी मुसलमान बच्चे मैट्रिक तक शिक्षा पूरी करते हैं जबकि दूसरे समूह के 26 प्रतिशत बच्चे।
  (3) देश के मुख्य कालेजों में स्नातक स्तर के 25 विद्यार्थियों में 4 फीसदी और स्नातकोत्तर स्तर के 50 विद्यार्थियों में मात्र 2 फीसदी मुसलमान थे।
  (4) सन् 2004–05 और 2005–06 के प्रवेश आँकड़ों के मुताबिक आई0आई0एम0 में प्रवेश पाने वालों में मुस्लिमों का अनुपात 1.3 फीसदी था, आई0आई0टी0 में मुसलमान मात्र 3.3 प्रतिशत थे।
- इसी प्रकार विकलांगता एवं एच0आई0वी0 संक्रमित बच्चों के सम्बन्ध में भी एक रिपोर्टिंग दृष्टव्य है। इसके अनुसार "भारत में विकलांगता के शिकार लगभग छः करोड़ व्यक्तियों में 20 प्रतिशत संख्या बच्चों की है। हर साल जन्म लेने वाले कुल बच्चों में 80 लाख से लेकर 1 करोड़ तक विकलांग होते हैं। स्कूल में भर्ती हो सकने में सामान्य बच्चों के मुकाबले विकलांग बच्चों की सम्भावना 5 गुना कम होती है। इसी तरह एच0आई0वी0 और एड्स के संक्रमण के शिकार 22 लाख बच्चों को भी नजरअंदाज नहीं किया जा सकता।"

इसी क्रम में यह जानना भी रोचक होगा कि वंचित वर्गों की शैक्षिक स्थिति के बारे में हमारे शोध अध्ययन क्या कहते हैं?वस्तुतः शिक्षाशास्त्र के अध्यापकों और शोधार्थियों के लिए वंचित वर्गों की शिक्षा फिलहाल एक प्राथमिकता का क्षेत्र (Priority Area) है। हाल के वर्षों में किए गए कुछ शोध–अध्ययनों के परिणाम इस प्रकार प्राप्त हुए हैं:–

- मिश्रा (2008) ने आर्थिक रूप से वंचित मलिन बस्तियों की बालिकाओं पर किए गए एक अध्ययन में पाया कि आर्थिक रूप से सम्पन्न बालिकाओं की तुलना में इन बालिकाओं की शैक्षिक निष्पत्ति अत्यधिक न्यून है।

- पाण्डेय (2008) ने वाराणसी नगर में पूर्व किशोरावस्था के आठवीं कक्षा में अध्ययनरत छात्र–छात्राओं के एक न्यादर्श पर उनकी आवश्यकता–वरीयताओं (Need Preferences) के सम्बन्ध में किये गये एक अध्ययन में पाया कि निम्न वंचित समूह (Low deprived group) की तुलना में उच्च वंचित समूह (High deprived group) के बच्चे परम्पराओं और रुढ़ियों के अनुसार अधिक चलना चाहते हैं और दूसरों से सुझावों की आवश्यकता महसूस करते हैं।

- मिश्रा (2005) ने अपनी पी.एच.डी. डिग्री हेतु किये गये शोधकार्य "विभिन्न जाति समूहों के विद्यार्थियों की मनोकामनाओं एवं शैक्षिक दुश्चिन्ता का तुलनात्मक अध्ययन" में पाया कि अन्य पिछड़ी जाति और सामान्य जाति के विद्यार्थियों की तुलना में अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों में आक्रामकता आवश्यकता (Aggression Need) सार्थक रूप से अधिक थी।

- केसरवानी (2008) ने ग्यारहवीं कक्षा में अध्ययनरत सामाजिक रूप से वंचित तथा सामान्य वर्ग की छात्राओं के आकांक्षा स्तर के तुलनात्मक अध्ययन में पाया कि सामान्य वर्ग में आकांक्षा स्तर वंचित वर्ग की अपेक्षा सार्थक रूप से उच्च था।

- सिंह (2008) द्वारा बाल श्रमिक बालिकाओं में शैक्षिक वंचन के कारणों पर शोध अध्ययन किया गया जिसमें उन्होंने पाया कि अध्ययन में शामिल 95 प्रतिशत बालिकाओं के मतानुसार उनके द्वारा की जा रही मजदूरी का मुख्य कारण पारिवारिक निर्धनता है। इसके अलावा 40 प्रतिशत बालिकाओं ने माता–पिता की अशिक्षा और अधिक संतानोत्पत्ति को भी इसका कारण माना है।

- यादव (2005) ने 14 उद्योगों में लगे 200 बाल श्रमिकों पर किये गये अपने अध्ययन में पाया कि उनमें से 60 प्रतिशत आर्थिक कारणों से शिक्षा से वंचित हैं जबकि 80 प्रतिशत की शिक्षा एवं प्रशिक्षण के प्रति अभिवृत्ति सकारात्मक पाई गई।

- श्रीवास्तव और देब (2008) द्वारा सामाजिक एवं आर्थिक दृष्टि से वंचित पूर्वस्नातक विद्यार्थियों के व्यक्तित्व आयामों पर किये गये एक अध्ययन में पाया गया कि निम्न सामाजिक–आर्थिक स्तर के विद्यार्थी उच्च सामाजिक–आर्थिक स्तर के विद्यार्थियों की तुलना में कम क्रियाभिमुखी आग्रही (Assertive) और उत्साही किन्तु अधिक संदेहास्पद, अवसादी एवं संवेगात्मक दृष्टि से अस्थिर होते हैं।

यह तो रही वर्तमान दशा से सम्बन्धित कुछ बातें। क्या प्रिंट मीडिया, क्या प्रबुद्ध जन, क्या सरकारी प्रतिवेदन और क्या शैक्षिक शोध अध्ययनों के परिणाम– सभी यही दर्शाते हैं कि

वंचित वर्गों में शिक्षा की स्थिति सुधारने तथा उनके व अग्रणी वर्गों के मध्य मौजूद वर्तमान शैक्षिक अंतराल को पाटने की दिशा में अभी बहुत कुछ करना शेष है।

इस सम्बन्ध में काफी कुछ कहा जा सकता है और पहले भी विभिन्न स्तरों से कहा जा चुका है। किन्तु हमारा दुर्भाग्य यह है कि हम शैक्षिक सुधारों की दिशा में बड़े–बड़े आयोग, शिक्षा समितियाँ, शिक्षा नीतियाँ और कानून तो बना देते हैं किन्तु उनके सफल क्रियान्वयन हेतु प्रतिबद्धता नहीं सिद्ध कर पाते। सच बात तो यह है कि प्रतिबद्धता के अभाव में हमारी तमाम योजनाएँ और नीतियाँ मात्र कागजी खाना–पूरी होकर रह जाती हैं। लेखक–त्रय की राय में संदर्भगत समस्या के समाधान हेतु कतिपय व्यावहारिक सुझाव निम्नवत् हो सकते हैंः

- पहली बात तो यह कि शिक्षा में राजनीति पूरी तरह बन्द हो। एक लोकतांत्रिक व्यवस्था, जिसमें सरकार एक समतामूलक समाज की स्थापना के लिए संकल्पबद्ध हो, शैक्षिक मामलों को लेकर विभिन्न राजनैतिक दल आपस में राजनीति करें–यह बड़ा ही दुखद और राष्ट्रीय हितों के लिए घातक लक्षण है। जैसा कि राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद (एन0सी0ई0आर0टी0) के पूर्व निदेशक जे0एस0 राजपूत (2007) लिखते हैं, ''जब विश्व की शिक्षा–व्यवस्थाएँ 'ज्ञान समाज' की ओर अग्रसर होने के लिए आवश्यक नवाचार तथा परिवर्तनों में व्यस्त हैं, तब भारत में राजनीति की रणनीति पूरी शिक्षा–प्रणाली पर हावी है।'' उनके मतानुसार ''वर्षों से भारत की राजनीति कुछ नेताओं के लिए अल्पसंख्यक तथा गरीब और पिछड़े वर्गों व जातियों के इर्द–गिर्द ही घूमती रही है।'' अपनी इन टिप्पणियों के औचित्य स्वरूप उन्होंने तत्समय कतिपय राजनैतिक स्तरों से अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय को अल्पसंख्यक संस्थान का दर्जा देने की बात उठाने, केन्द्रीय संस्थानों में अल्पसंख्यकों व पिछड़ों को आरक्षण लागू करने की घोषणा किए जाने आदि का दृष्टांत दिया है। उन्हीं के शब्दों में, ''मुस्लिम समुदाय को भरपूर आश्वासन हर चुनाव के पहले दिए गए। सत्ता में आने पर हर दल ने उन्हें भुला दिया।'' अतः लाख टके का प्रश्न तो यही उठता है कि सच्चर कमेटी ने मुस्लिम समुदाय की जो स्थिति प्रकट की है उसके सुधार के प्रति यदि देश की सरकार संवेदनशील और ईमानदार रही है तो उसके क्रियान्वयन में बाधक कौन रहा है?

  वस्तुतः हमारे सामाजिक व राष्ट्रीय हितों की दृष्टि से आवश्यकता तो इसी बात की है कि शिक्षा में आरक्षण वंचित वर्गों के उत्थान का ही औजार बना रहे, राजनीति का नहीं।

- दूसरी बात यह कि शिक्षा के क्षेत्र में गैर–बराबरी खत्म करने का कदाचित् सबसे बढ़िया उपाय अभी तक कोठारी शिक्षा आयोग (1964–66) की यह सिफारिश रही है कि देश में सार्वजनिक शिक्षा की समान विद्यालय प्रणाली (Common School System of Public Education) लागू हो जिसमें 'पड़ोसी विद्यालय योजना (Neighbourhood School Plan) इसका अविभाज्य अंग हो। किन्तु आज तक केन्द्र की सभी सरकारों ने इसे नकारा है। आयोग के शब्दों में, "The neighbourhood school concept implies

that each school should be attended by all children in the neighbourhood irrespective of caste, creed, community, religion, economic condition or social status; so that there would be no segregation in schools." वास्तव में इस योजना के अन्य लाभों, जैसे– प्रारम्भ से ही बच्चों में सामाजिक और राष्ट्रीय एकता की भावना को बढ़ावा देने, वंचित और सुविधा सम्पन्न वर्गों के मध्य आपसी समझ और सद्भाव विकसित करने, जन सामान्य के साथ अपने अनुभवों को बाँटने के अवसर प्रदान करने आदि, जो सभी एक 'अच्छी शिक्षा' के महत्वपूर्ण घटक कहे जा सकते हैं, के अतिरिक्त इसका सबसे बड़ा लाभ तो इस बात में था कि अपने पड़ोस के ही विद्यालय में शिक्षा प्राप्त करने की बाध्यता के चलते धनी, विशेषाधिकार प्राप्त और प्रभावशाली–सभी वर्गों के लोग सार्वजनिक शिक्षा प्रणाली में रुचि लेने और सुधार करने को बाध्य होंगे।

लेखक–त्रय की राय में कोठारी कमीशन का यह सुझाव संदर्भगत समस्या के समाधान में विशेष योगदान कर सकता था। ऐसे सुझावों की अनदेखी करने का ही यह परिणाम है कि देश में आज दो प्रकार की शिक्षा–व्यवस्था है– एक गरीबों के बच्चों के लिए, और दूसरी अमीरों के बच्चों के लिए। वस्तुतः शिक्षा आयोगों व समितियों की सिफारिशों को लागू करना एक राजनीतिक निर्णय होता है जिसको शिक्षा के निजीकरण को बढ़ावा देने वाली शक्तियों ने सदैव नकारा है। वस्तुतः इस प्रसंग में विश्व प्रसिद्ध अर्थशास्त्री एवं नोबल पुरस्कार प्राप्त अमर्त्यसेन का यह अनुभव–जनित कथन गौर करने योग्य है कि "वास्तव में, अक्सर परोसी जाने वाली दलीलों के उलट हमें कहीं यह देखने को नहीं मिला कि यदि पड़ोस के स्कूल के सुरक्षित माहौल में सस्ती व प्रभावी शिक्षा दी जाती है तो माता–पिता में अपने बच्चों को स्कूल भेजने को लेकर कोई हिचक हो, भले ही उसकी संतान बेटा हो या बेटी।"

अन्त में, शिक्षाशास्त्र के जानकारों और पेशेवरों से प्राप्त कतिपय सुझावों पर भी एक संक्षिप्त दृष्टि डालना समीचीन प्रतीत होता है। क्या कहते हैं वे लोग जो शैक्षिक प्रशासन, शिक्षण और शैक्षिक अनुसंधानों से जुड़े हुए हैं? यूँ तो इस बात को लेकर कभी कोई विवाद अथवा मतभेद नहीं रहा है कि सामाजिक और आर्थिक वंचन बच्चों के व्यक्तित्व, शिक्षा–दीक्षा और निजत्व के विकास पर व्यापक प्रभाव डालता है, किन्तु जहाँ तक वंचित वर्गों की शिक्षा के प्रबन्धन का प्रश्न है, इस सम्बन्ध में विशेषज्ञों की राय में बड़ी ही विविधता और व्यापकता देखने को मिलती है, जिनके क्रियान्वयन में भी जानकारों द्वारा ही अनेक व्यावहारिक कठिनाईयों और आशंकाओं की बात उठाई जाती रही है। लेखकगण की राय में इस मत–वैभिन्य का प्रमुख कारण कदाचित् इस तथ्य में सन्निहित है कि कोई भी अकेली शिक्षा–व्यवस्था, संस्था अथवा शिक्षण योजना वंचित बच्चों की आवश्यकताओं के सम्पूर्ण क्षेत्र को आच्छादित नहीं कर सकती। इसके लिए हमें एक ऐसी व्यूह रचना करनी होगी जिसके अन्तर्गत विभिन्न स्तरों पर, विभिन्न प्रकार की संस्थाओं द्वारा, विभिन्न प्रकार के कार्यक्रम संचालित करने होंगे तभी उनके संयुक्त प्रयासों के प्रतिफलस्वरूप हम वंचित व गैर–वंचित वर्गों की शिक्षा को समकक्ष धरातल पर लाने में कामयाब हो सकेंगे। ये सुझाव उपर्युक्त के अतिरिक्त अधोलिखित प्रकार के हैं:–

- शैक्षिक प्रशासक एवं नीति निर्धारक नगरीय और ग्रामीण अंचलों के मध्य वंचित वर्गों के

शैक्षिक प्रावधानों में किसी प्रकार का भेदभाव न आने दें, जैसे– विद्यालयों की उपलब्धता, शिक्षा की गुणवत्ता, भौतिक संसाधन, आदि।

- सरकारी संस्थाओं के साथ–साथ प्राईवेट संस्थाओं को भी वंचित वर्गों की शिक्षा का दायित्व सौंपा जाये।
- विभिन्न प्रकार के वंचित बच्चों हेतु संसाधन केन्द्रों का विकास किया जाय और इन्हें लोकप्रिय बनाने हेतु आवश्यक कदम उठाये जायें।
- विकास की दृष्टि से वंचित क्षेत्रों, जैसे–पर्वतीय, दलदली, जंगली, आदि में आवासित आबादी हेतु विशेष कदम उठाये जायें।
- सरकारी एवं गैर–सरकारी संस्थानों के मध्य समुचित समन्वय स्थापित करने हेतु आवश्यक कदम उठाये जायें।
- विभिन्न प्रकार के वंचित वर्गों की गतिकी (Dynamics) और उनकी शिक्षा से सम्बन्धित शोध को विभिन्न प्रकार से प्रोत्साहित किया जाये।
- वंचित वर्गों के बच्चों हेतु विद्यालयों में निर्देशन, परामर्श और उपचारात्मक शिक्षण के व्यापक प्रबन्ध किए जायें।
- निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि विचारों व सुझावों की कोई कमी नहीं। असल बात तो इनके सफल क्रियान्वयन की है जो इस बात पर निर्भर करता है कि हम और हमारी सरकारें कहाँ तक इनके प्रति ईमानदारी और प्रतिवद्धता दिखाती हैं।

संदर्भ

- इन्टरनेट : लिट्रेसी रेट्स इन इण्डिया, सेन्सस 2011।
- Ibid, pp. 13-18.
- Ibid, pp. 96-98.
- केशरवानी सरिता, (2008), सामाजिक वंचित तथा सामान्य छात्राओं के आकांक्षा स्तर का तुलनात्मक अध्ययन, जर्नल ऑफ एजुकेशनल स्टडीज, वाल्यूम 6, न02, पृष्ठ 93–95।
- खन्ना, एम0 (1980), ए स्टडी ऑफ रिलेशनशिप बिटविन सोशियो–इकोनॉमिक बैकग्राउण्ड एण्ड एकेडेमिक एचीवमेन्ट एट जूनियर हाईस्कूल लेवल, पीएच0डी थीसिस, कानपुर विश्वविद्यालय।
- झा, इरा, शिक्षित भारत का सपना, दैनिक जागरण, लखनऊ, 3 अप्रैल, 2010।
- पाण्डेय, के0 (1984), ए स्टडी ऑफ कॉग्निटिव प्रोसेस एण्ड मोटिवेशनल पैटर्न्स ऑफ डिप्राइव्ड स्टूडेन्ट्स इन रिलेशन टू देयर एचीवमेन्ट डी0फिल0 थीसिस, शिक्षाशास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय।
- पाण्डेय कल्पलता (2008) नीड प्रिफरेन्सेज एमंग डिप्राइब्ड प्रीएडोलसेन्ट्स, जर्नल ऑफ एजुकेशनल स्टडीज, वाल्यूम 6 न0 2 पृ0 13–18

- मिश्रा, ध्यानेन्द्र कुमार (2005), विभिन्न जाति समूहों के विद्यार्थियों की मनोकामनाओं एवं शैक्षिक दुश्चिन्ता का तुलनात्मक अध्ययन, अप्रकाशित शोध प्रवन्ध शिक्षाशास्त्र विभाग, म0गां0 काशी विद्यापीठ, वाराणसी।
- प्रोवेन्स एण्ड लिप्टन, आर0जी0 (1962), इफेक्ट ऑफ डिप्राइवेशन आन इन्सटिट्यूशनलाइज्ड इनफेन्ट्स साइकोल, एनाल, स्टडी ऑफ चाइल्ड, 189–205।
- मिश्रा, अनामिका (2008), आर्थिक रूप से वंचित मलिन बस्तियों की बालिकाओं की निष्पत्ति एवं व्यक्तित्व में सम्बन्ध का अध्ययन, जर्नल ऑफ एजुकेशनल स्टडीज, वाल्यूम 6 नं0 2 पृष्ठ 106–109
- यादव, राकेश कुमार (2005), बाल श्रमिकों की उद्योग में संलग्नता एवं उनकी शैक्षिक समस्याओं का अध्ययन, अप्रकाशित लघु शोध ग्रन्थ, राज्य शैक्षिक प्रबन्धन एवं प्रशिक्षण संस्थान, उत्तर प्रदेश, इलाहाबाद।
- राजपूत, जगमोहन सिंह, शिक्षा में राजनीति के खेल, दैनिक जागरण, लखनऊ, 4 मई, 2007।
- राष्ट्रीय शिक्षा नीति–1986, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार (शिक्षा विभाग), नई दिल्ली, मई 1986, पृ. 4.।
- राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986), क्रियान्वयन कार्यक्रम 1992 भारत सरकार, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, शिक्षा विभाग पृ. 1–20।
- शिक्षा आयोग–प्रतिवेदन, (1964–66), शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार
- शिक्षा चिन्तन, कानपुर, वर्ष–9, अंक 36, पृ. 16–21।
- सेन, अमर्त्य, (2012) "और भी बाधाएँ हैं शिक्षा की राह में", हिन्दुस्तान दैनिक, लखनऊ, 13 अप्रैल।
- सेन, अमर्त्य, पूर्वोक्त।
- सिंह, एन0के0, (2012) सर्वशिक्षा की राह में खड़ी बाधाएँ, हिन्दुस्तान दैनिक, लखनऊ, 21 अप्रैल।
- सिंह, एन0के0, पूर्वोक्त।
- सिंह, भावना एवं सिंह बबिता (2008) बाल श्रमिक बालिकाओं में शैक्षिक वंचन के कारणों का अध्ययन, जर्नल ऑफ एजुकेशनल स्टडीज, वाल्यूम 6 न0 2 पृ0 96–98
- श्रीवास्तव, निधि एवं देव काजल (2008) ए स्टडी ऑफ पर्सनालिटी डाइमेन्शन्स ऑफ सोशियली एण्ड इकानोमिकली डिप्राइव्ड अन्डरग्रेजुएट, स्टुडेन्टस, जर्नल ऑफ एजुकेशनल स्टडीज वाल्यूम 6 न0 2, पृ0 43–48
- हिन्दुस्तान दैनिक, लखनऊ, अगस्त 2009।
- हिन्दुस्तान दैनिक, लखनऊ, 23 जनवरी, 2012।

Emerging Trends in Education [Vol. 3 - No. 1 . pp 115-120]

भारत में शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009: चुनौतियाँ

पूजा सिंह*

अरविन्द कुमार**

भारत में सभी बच्चों के लिए अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा के अधिकार की मांग बहुत पहले से की जा रही है। सन् 1882 ई0 में हण्टर कमीशन के सम्मुख दादा भाई नरौजी एवं ज्योतिराव फूले ने भारतीय बच्चों के लिए निःशुल्क एवं अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा की मांग रखी थी। इसके बाद सन् 1893 में बड़ौदा नरेश सयाजीराव गायकवाड़ ने अपने राज्य के अमरेली तालुके में निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा प्रारम्भ की। इसी क्रम में गोपाल कृष्ण गोखले ने प्राथमिक शिक्षा को समस्त देश में निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा करने के लिए सन् 18 मार्च 1911 को बिल प्रस्तुत किया परन्तु अंग्रेज सरकार ने इस बिल को अस्वीकृत कर दिया।

स्वतन्त्रता के बाद हमारे संविधान निर्माताओं ने राज्य के नीति के निर्देशक तत्व में अनुच्छेद 45 में 6–14 वर्श के बच्चों के लिए निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा की बात कही लेकिन यह निर्धारित लक्ष्य अभी तक पूरा नहीं हो सका। उच्चतम न्यायालय ने मोहिनी जैन बनाम कर्नाटक राज्य (1992) के मामले में निर्णय दिया कि शिक्षा, प्रत्येक नागरिक का मूल अधिकार है और उन्नीकृष्णण बनाम आन्ध्र प्रदेश (1993) के मामले में उच्चतम न्यायालय ने शिक्षा को मूल अधिकार माना और इसे 14 वर्ष के बच्चों तक सीमित किया।

सन 1993 के फैसले के बाद सरकार द्वारा सन् 2002 में 6–14 आयु वर्ग के बच्चों के लिए निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का विधेयक पारित करके शिक्षा को मौलिक अधिकार बनाया गया। इस संविधान संशोधन में अनुच्छेद 21–A और 51–A(k) जोड़ा गया और अनुच्छेद 45 में परिवर्तन किया गया। अनुच्छेद 21–A में सभी राज्यों को 6–14 वर्ष के बच्चों को निःशुल्क एवं अनिवार्य गुणवत्तापूर्ण शिक्षा उपलब्ध कराने को कहा गया है।

अनुच्छेद 51–A(K) में यह कहा गया है कि सभी माता–पिता या अभिभावकों का यह कर्तव्य है कि वे अपने 6–14 आयु वर्ग के बच्चों को निःशुल्क एवं अनिवार्य प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त करने का अवसर प्रदान करे।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21(A) के विधि का अनुसरण करते हुए संसद ने सभी 6–14 आयु वर्ग के बच्चों के लिए निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 पारित किया। फरवरी 2010 में केन्द्र सरकार ने भारत के राजपत्र में इस अधिनियम को प्रकाशित किया और कहा कि यह अधिनियम 1 अप्रैल 2010 से लागू होगा।

शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 –:

शिक्षा के अधिकार अधिनियम 2009 के महत्वपूर्ण बिन्दू निम्नलिखित है–

सभी 6–14 आयु वर्ग के बच्चों को निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा।

* प्राध्यापक, शिक्षाशास्त्र विभाग, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी।

** शोध छात्र, शिक्षा संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी।